International Journal of Multidisciplinary Trends

E-ISSN: 2709-9369
P-ISSN: 2709-9350
www.multisubjectjournal.com
IJMT 2023; 5(9): 09-13
Received: 07-07-2023
Accepted: 12-08-2023

प्रो0 रश्मि कुमार
प्रोफेसर, हिंदी और आधुनिक भारतीय भाषा विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत

Corresponding Author:
प्रो0 रश्मि कुमार
प्रोफेसर, हिंदी और आधुनिक भारतीय भाषा विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत

प्रेमचन्द के उपन्यासों में मुस्लिम समाज का चित्रण

प्रो0 रश्मि कुमार

सारांश
प्रेमचन्द हर प्रकार की साम्प्रदायिकता के विरूद्ध हैं, चाहे हिन्दू साम्प्रदायिकता हो या मुस्लिम साम्प्रदायिकता। 1930 ई0 में अल्लामा न्याज़ फतेहपुरी ने हिन्दुस्तानी ऐकेडमी इलाहाबाद, से हिन्दुओं को उर्दू अनुवाद का कार्य मिलने पर विवाद उठाया कि उन्हें यह काम क्यों दिया गयाः प्रेमचन्द को न्याज़ साहब की सोच तीर के समान लगी और इस विचारधारा की बखिया उधेड़ दी कि उर्दू मात्रा मुसलमानों की भाषा है, हिन्दुओं की भाषा है, उन्होंने तीव्र एवं कटु लहजे में लिखा–''उर्दू न मुसलमानों की बपौती है न हिन्दुओं की, उसको लिखने–पढ़ने का हक़ दोनों को हासिल है। हिन्दुओं का उस पर हक़ पहला है कि वह हिन्दी की एक शाखा है। हिन्दी पानी और मिट्टी से उसकी रचना हुई है और सिर्फ थोड़े–से अरबी–फ़ारसी शब्दों के दाख़िल कर देने से उसकी असलियत नही बदल सकती, उसी तरह जैसे पहनावा बदलने से राष्ट्रीयता या जाति नहीं बदल सकती।''

कुटशब्दः मुसलमानों, प्रेमचन्द, रचना, असलियत, बखिया

प्रस्तावना
प्रेमचंन्द्र की रचनाएँ आधुनिक भारत को समझने का एक महत्वपूर्ण माध्यम हैं, क्योंकि उन्हीं के समय से भारतीय पुनर्जागरण का प्रारंभ होता है, जिसके पैरों की आहट उनकी रचनाओं में महसूस होती है। राष्ट्रीय जीवन की परिवर्तनशीलता, क्रिया–प्रतिक्रिया, प्रगति एवं प्रतिक्रियावादिता, धर्म तथा मानवता की परछाइयाँ प्रेमचन्द की रचनाओं में झलकती हैं। प्रेमचन्द की अनुभूति नदी के किनारे खड़े किसी दर्शक के समान नही है वरन् उन्होंने राष्ट्रीय जीवन के गहरे पानी में उतरकर समस्याओं से बोझिल नैया को किनारे जाने मे अपने सहयोगियों का हाथ बंटाया था। प्रेमचन्द राजनीतिक नेता न थे कि उसके बाह्य प्रभाव की अभिव्यक्ति तक सीमित रहते । उनकी पैनी निगाहों ने गहराइयों मे उतरने का प्रयास किया। उनकी रचनात्मक शक्ति से समस्याओं के अन्तःपुर का विश्लेषण किया। उसमें जीवन के उन्नतिशील संभावनाएं तलाश करके साहित्य को नये क्षितिज की ओर बेजान में सहायता की।
डॉ0 मसीहुज़्ज़माँ की विचार सही है कि प्रेमचन्द उर्दू के कहानीकारों में इस आधार पर वरीयता रखते हैं कि उन्होंने गांव की समस्याओं को अपना विषय बनाया। भारतीय गांव यूरोपीय या किसी दूसरे देश के गांवों से बहुत भिन्न हैं। ये गांव शहरी जीवन का अंग नही हैं, बल्कि उनके पास शहरों से भिन्न–विभिन्न सामाजिक और नैतिक मूल्यों, राष्ट्रीय एवं परम्परागत विश्वास हैं, जिन पर उन्हें गौरव का आभास होता है। इसकी सुरक्षा के लिए प्राणों की आहुति देने के लिए तत्पर रहते हैं। यद्यपि गांव के लोग अनेक वर्गों में बंटकर रहते हैं, उनका जीवन छोटी–छोटी जातियों की इकाइयों में बंटा रहता है, फिर भी उनके जीवन की आधारभूत एकता नहीं टूटती । ये लोग प्रतिदिन के जीवन, रहन–सहन, रोजगार, दुःख और विवाह आदि मे अपने परिपाटी से दृढ़तापूर्वक बंधे रहते हैं। इनको अध्ययन की सरलता के लिए तीन खानों में रखा जा सकता है। व्यवसाय के अनुसार, धर्म के अनसार और जाति–पाति के अनुसार, जिनमें प्रथम अधिक महत्वपूर्ण है। इस विभाजन का कारण वर्गीय व्यवस्था से भिन्न होता है। यदि व्यवसाय के अनुसार वर्ग बनाये गये होते, तो एक जाति मे एक ही व्यवसाय के लोग दिखायी देते, किन्तु सारे दूध बेचनेवाले अहीर, वस्त्रा बुननेवाले जुलाहे, सब्ज़ी उगानेवाले काछी और मांस बेचने वाले कसाई नहीं होते।
प्रेमचन्द हर प्रकार की साम्प्रदायिकता के विरूद्ध हैं, चाहे हिन्दू साम्प्रदायिकता हो या मुस्लिम साम्प्रदायिकता। 1930 ई0 में अल्लामा न्याज़ फतेहपुरी ने हिन्दुस्तानी ऐकेडमी इलाहाबाद, से हिन्दुओं को उर्दू अनुवाद का कार्य मिलने पर विवाद उठाया कि उन्हें यह काम क्यों दिया गयाः प्रेमचन्द को न्याज़ साहब की सोच तीर के समान लगी और इस विचारधारा की बखिया उधेड़ दी कि उर्दू मात्रा मुसलमानों की भाषा है, हिन्दुओं की भाषा है, उन्होंने तीव्र एवं कटु लहजे में लिखा–
''उर्दू न मुसलमानों की बपौती है न हिन्दुओं की, उसको लिखने–पढ़ने का हक़ दोनों को हासिल है। हिन्दुओं का उस पर हक़ पहला है कि वह हिन्दी की एक शाखा है। हिन्दी पानी और मिट्टी से उसकी रचना हुई है और सिर्फ थोड़े–से अरबी–फ़ारसी शब्दों के दाख़िल कर देने से उसकी असलियत नही बदल सकती, उसी तरह जैसे पहनावा बदलने से राष्ट्रीयता या जाति नहीं बदल सकती।''

प्रेमचन्द क्रोध और झल्लाहट में न्याज़ साहब की सोच के शिकार हो गये कि हिन्दी हिन्दुओं की भाषा है। इसको प्रेमचन्द के विचार की एक लहर समझना चाहिए और बस! सामूहिक रूप से देखा जाय, तो हिन्दुओं और मुसलमानों से संबंधित प्रेमचन्द का दृष्टिकोण बहुत स्पष्ट रहता है। वह भारत की संयुक्त सभ्यता एवं संस्कति के पक्षधर थे। हिन्दुओं और मुसलमानों के मध्य अलगाव के विरोधी थे। धर्म के मामले में एकता चाहते थे। राम–रहीम के नाम पर अलगाववादी रवैया पसंद न करते थे।

प्रेमचन्द की स्वच्छंदवादिता और आदर्शवादिता ने कहीं–कहीं उनकी धार्मिक भावना में तीव्रता उत्पन्न कर दी है, लेकिन उसमें अदूरदर्शिता, पक्षपात या साम्प्रदायिकता की गंध नहीं मिलती । प्रेमचन्द हिन्दू–मुस्लिम एकता के प्रबल समर्थक एवं प्रचारक थे। उन्होंने अनेक संपादकीय और नोट लिखकर अलगाव की खाई को पाटने का प्रयास किया। प्रेमचन्द की रचनाओं में हिन्दू–मुस्लिम एकता को सुदृढ़ करने का प्रयास दिखायी देता है। प्रोफेसर प्रकाशचन्द्र गुप्त के शब्दों में–

''मुस्लिम संस्कृति के यहाँ आपको बड़े उच्च आदर्श दीखेंगे। किस, प्रकार दाऊद ने अपने पुत्रा की हत्या करनेवाले का क्षमा कर दिया, तैमूर का पाषाण हृदय कैसे हमीदा के विचारों से पिघला, लैला के संगीत से किस प्रकार राजकुमार मोहित होकर फकीर हो गया। यह सब हमें यहां अंकित मिलेगा।''हिन्दू–मुस्लिम एकता की समस्याओं के विभिन्न और अनेक स्तर हैं, जो कि मात्रा नारेबाजी के माध्यम से प्राप्त नहीं की जा सकती। उस युग में राष्ट्रीय एकता के विचार को राजनीतिक हिन्दुस्तानी लोगों के शोषण के लिए समुदायों में रूढ़िवादी तत्त्वों के साम्प्रादायिक भावना को भड़काती रहती थी।

'सोज़े–वतन' की समस्त कहानियों में स्वतंत्राता की भावना भरी पड़ी है। इसकी पांच कहानियों में चार कहानियाँ (अर्थात् 'सिला–ए–मातम' के अतिरिक्त) देशभक्ति की भावना से भरपूर हैं। उनकी कहानियों के नायक देश की स्वतंत्राता को आत्मविभोर और स्वच्छंद दृष्टिकोण से देखते हैं। मातृभूमि के नाम पर धन–दौलत का बलिदान प्रस्तुत करने के लिए तन–मन–धन से तैयार रहते हैं। इसको अपने जीवन का पवित्रातम कार्य समझते है। इन कहानियों में राष्ट्रीय जीवन के उन सामाजिक एवं आर्थिक आयामों की ओर ध्यान नही दिया गया है, जो बाद में प्रेमचन्द के रूचिकर विषय बने। इन कहानियों में अतीत गौरवगान को उजागर करने का औचित्य है कि विदेशी प्रभाव के आधार पर राष्ट्रीय जीवन में हीन भावना का विषय घुलता जा रहा था, जिसका उपचार अतीत की महानता की भावना को उजागर करने और देशभक्त उत्पन्न करने से दूर हो सकता था। प्रेमचन्द ने 'सोज़े–वतन' की उर्दू भूमिका में अपने उद्देश्य को विस्तार दिया है–

''अब भारत के राष्ट्रीय विचारधारा ने प्रौढ़ता के शिखर पर एक और पग बढ़ाया और देशप्रियता की भावनायें लोगों के मन में सिर उभारने लगीं। क्योंकर संभवतया कि इसका प्रभाव साहितय पर न पड़ता : यह कुछेक कहानियाँ इस प्रभाव का प्रारंभ हैं तथा विश्वास है कि जैसे–जैसे हमारे विचार उच्च होते जायेंगे, उसी रंग के साहित्य को दिन–प्रतिदिन उन्नति प्राप्त होती जायेगी। हमारे देश को ऐसी पुस्तकों की अत्यंत आवश्यकता है, जो नयी पीढ़ी के मन पर देश–प्रेम की महानता का चिन्ह स्थापित करें।''

राष्ट्रीय स्वतंत्राता आंदोलन की राह में हिन्दू–मुस्लिम एकता की समस्या भारी पत्थर बन चुकी थी। विदेशी शासन, हिन्दू–मुस्लिम एकता समाप्त करने के लिए हर संभव प्रयास करता रहता था। नौकरियों और पदों में हिन्दुओं और मुसलमानों के पृथक्–पृथक् स्थान निश्चित करना, हिन्दू विश्वविद्यालय, मुस्लिम विश्वविद्यालय, रेलवे स्टेशनों पर हिन्दूओं और मुसलमानों के लिए पृथक्–पृथक् खाने–पीने की व्यवस्था, हिन्दू पानी, मुस्लिम पानी आदि ऐसी वस्तुएँ थीं, जो मुल रूप में हिन्दू–मुस्लिम एकता को बिखेर देती थीं। 1857 ई0 में हिन्दू–मुस्लिम एकता से अंग्रेजों को जो खतरा उत्पन्न हुआ था, उसके परिदृश्य मे वह एकता की हर संभव शक्ति को समाप्त कर देना चाहते थे। भारतीय राजनीति के साम्प्रदायिक संगठन मुस्लिम लीग, हिन्दू महासभा आदि भी राष्ट्रीय जीवन को अलग–अलग रखानों में विभक्त करती थीं। इनके विरोधाभासों में साम्प्रादायिकता, स्वतंत्राता आंदोन के वातावरण को विषैला करती थी। इसको रोकरने के लिए राष्ट्रीय जीवन के विभिन्न मोर्चो पर संघर्ष जारी था। डॉ0 बेनीप्रसाद ने वस्तु–स्थिति का विश्लेषण करते हुए लिखा है :

''यदि साम्प्रदायिक दंगे होने लगते, तो उससे सामाजिक व्यवस्था की परम्पराएँ टूटतीं तथा उदारता पर आधारित संबंध विचलित होने लगते । लोग मानवता की ओर से हटकर पशुता की ओर बढ़ते। समाज में अनुदारता एवं निर्दयता बढ़ती जो लूटमार, आगज़नी, नर्दोषों पर छिपकर आक्रमण करने, वृद्धों, महिलाओं तथा निर्दोष बच्चों पर भी चोट नही करने से नहीं झेंपती थीं।''यह विश्लेषण वर्तमान भारत के संदर्भ में भी उतना ही प्रासंगिक हैं, जितना डॉ0 बेनीप्रसाद के विश्लेषण के समय में था।

यह साम्प्रदायिकता आर्थिक आधार रखती थी। एक सम्प्रदाय के लोग सौदा करके दूसरे सम्प्रदाय से आर्थिक लाभ प्राप्त करना चाहते थे, जिससे आपसी रस्सकशी की प्रवृत्ति बढ़ती थी। मुसलमानों में आर्थिक दुर्दशा अधिक थी, क्योंकि उन्होंने अंग्रेजी शिक्षा एवं संस्कृति से दूर रहने के कारण सरकारी अनुकंपाएँ खो दी थीं। अंग्रेजी सरकार की नौकरी में भ्झी उनकी संख्या नाममात्रा थी। इसके विरूद्ध प्रतिक्रिया हुई। जब मुसलमानों में सरकारी सेवा प्राप्त करने की प्रवृत्ति बढ़ी, तो उसमें दूसरे सम्प्रदायों से रस्साकशी आरंभ हो गयी। उस समय की मुस्लिम राजनीति बहुसंख्यक सम्प्रदाय से खिन्न थी और अंग्रेजों की सहायता से अपनी पिछली आर्थिक दुर्दशा दूर कर लेना चाहती थी। राष्ट्रीय जीवन में साम्प्रादायिकता लाइलाज बनती जा रही थी, जिसमें कई राष्ट्रीय नेता भी सम्मिलित थे, इससे राष्ट्रीय आंदोलन पर चोट पड़ती थी– उसकी व्यापकता घायल होती थी।'सुहाग की साड़ी' में विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार के माध्यम से आर्थिक लाभ की संभावना बतायी गयी है। स्वदेशी कपड़ों की मांग बढ़ने से जुलाहों और कोरियों की अच्छी स्थिति की कल्पना की गयी है।

कायाकल्प

महमूद–इसलिए कि कुरबानी करना हमरा हक है। अब तक हम आपके जजबात का लिहाज करते थे, अपने माने हुए हक भूल गए थे। लेकिन जब आपके लोग अपने हकों के सामने हमारे जजबात की परवाह नही करते, तो कोई वजह नहीं कि हम अपने हकों के सामने आपके जजबात की परवाह करें। मुसलमानों की शुद्धि करने का आपको पूरा हक हासिल है, लेकिन कम–से–कम पांच सौ बरसों में आपके यहां की शुद्धि की कोई मिसाल नहीं मिलती। आप लोगों ने एक मुर्दा हक को जिंदा किया है। इसीलिए न, कि मुसलमानों की ताकत औश्र असर कम हो जाए । जब आप हमें जेर करने के लिए नए–नए हथियार निकाल रहे हैं, तो हमारे लिए इसके सिवा और क्या चारा है कि अपने हथियार को दूनी ताकत में चलाएँ।ख्वाजा–कसम खुदा की, तुम जैसा दिलेर आदमी नही देखा । नाम के लिए तो गाय को माता कहने वाले बहुत हैं; पर ऐसे विरले ही देख; जो गौ के पीछे जान लड़ा दें। तुम कलमा क्यों नही पढ़ लेते?

ख्वाजा–काश, तुम जैसे समझदार तुम्हारे और भाई भी होते। मगर यहां तो लोग हमें मलिच्छ कहते हैं। यहां तक कि हमें कुत्तों से भी नजिस समझते हैं। उनकी थालियों में कुत्ते खाते हैं; पर मुसलमान उनके गिलास में पानी नहीं पी सकता। वल्लाह, आपसे मिलकर दिल खुश हो गया। अब कुछ–कुछ उम्मीद हो रही है

कि शायद दोनों कौमों में इत्तफाक हो जाए। अब आप जाइए। मैं आपको यकीन दिलाता हूँ, कुरबानी न होगी।

कर्मभूमि

सलीम उठ बैठा–देखो अमर, मैंने तुमसे कभी परदा नही रखा इसलिए आज भी परदा न रखूँगा। सकीना प्यार करने की चीज नहीं,, पूजा करने की चीज है। कम–से–कम मुझे वह ऐसी ही मालूम होती है। मैं कसम तो नहीं खाता कि उससे शादी हो जाने पर मैं कण्ठी–माला पहन लूंगा, लेकिन इतना जानता हूं कि उसे पाकर मैं जिन्दगी में कुछ कर सकूंगा। अब तक मेरी जिन्दगी सैलानीपन में गुजरी है। वह मेरी बहती हुई नाव का लंगर होगी। इस लंगर के बगैर नही जानता मेरी नाव किस भंवर में पड़ जायेगी। मेरे लिए ऐसी औरत की जरूरत है, जो मुझ पर हुकूमत करे, मेरी लगाम खींचती रहे।

तेग मुहम्मद पढ़ा–लिखा आदमी था। वह वाद–विवाद करने पर तैयार हो गया। सलीम ने उसकी हँसी उड़ाने की चेष्टा की। पन्थों को वह संसार का कलंक समझता था, जिसने मनुष्य–जाति को विरोधी दलों में विभक्त करके एक–दूसरे का दुश्मन बना दिया है। तेग मुहम्मद रोजा–नमाज का पाबन्द, दीनदार मुसलमान था। मजहब की तौहीन क्योंकर बरदाश्त करता ? उधर तो अहिराने में पुलिस और अहीरों में लाठियाँ चल रही थीं, इधर इन दोनों में हाथापाई की नौबत आ गयी। कसाई पहलवान था। सलीम भी ठोकर चलाने और घूँसेबाजी में मंजा हुआ, पुरतीला, चुस्त। पहलवान साहब उसे अपनी पकड़ में लाकर दबोच बैठना चाहते थे। वह ठोकर–पर–ठोकर जमा रहा था। ताबड़–तोड़ ठोकरें पड़ी, तो पहलवान साहब गिर पड़े और लगे मातृभाषा में अपने मनोविकारों को प्रकट करने । उसके दोनों साथियों ने पहले दूर ही से तमाशा देखना उचित समझा था; लेकिन जब तेग मुहम्मद गिर पड़ा, तो दोनों कमर कसकर पिल पड़े। यह दोनों अभी जवान पट्ठे थे, तेजी और चुस्ती में सलीम के बराबर । सलीम पीछे हटता जाता था और वह दोनों उसे ठेलते जाते थे। उसी वक्त सलोनी लाठी टेकती हुई अपनी गाय खोजने आ रही थी। पुलिस उसे उसके द्वार से खोल लायी थी। यहाँ यह संग्राम छिड़ा देखकर उसने अंचल सिर से उतारकर कमर में बांधा और लाठी संभालकर पीछे से दोनों कसाइयों को पीटने लगी। उनमें से एक ने पीछे फिरकर बुढ़िया को इतने जोर से धक्का दिया कि वह तीन–चार हाथ परे जा गिरी। इतनी देर में सलीम ने घात पाकर सामने के जवान को ऐसा घूंसा दिया कि उसकी नाक से खून जारी हो गया और वह सिर पकड़कर बैठ गया। अब केवल एक आदमी और रह गया। उसने अपने दो योद्धाओं की यह गति देखी, तो पुलिसवालों से फरियाद करने भागा। तेग मुहम्मद की दोनों घुटनियाँ बेकार हो गयी थीं। उठ न सकता था। मैदान खाली देखकर सलीम ने लपककर मवेशियों की रस्सियां खोल दीं और तालियां बजा–बजाकर उन्हें भगा दिया। बेचारे जानवर सहमे खड़े थे। आनेवाली विपत्ति का उन्हें कुछ आभास हो रहा था। रस्सी खुली तो सब पूंछ उठा–उठाकर भागे और हार की तरफ निकल गये।

प्रेमाश्रम

फैजुल्लाह खाँ का गौस खाँ के पद पर नियुक्त होना गांव के दुःखियारों के घाव पर नमक छिड़कना था। पहले ही दिन से खींच–तान होने लगी और फैजुल्लाह ने विरोधाग्नि को शांत करने की जरूरत न समझी । अब वह मुसल्लम गांव के सत्ताधारी शासक थे। उनका हुक्म कानून के तुल्य था। किसी को चूँ करने की मजाल न थी। गांव का दूध–घी, उपले–लकड़ी, घास–पयाल; कद्दू–कुम्हड़े, हल–बैल सब उनके थे। जो अधिकार गौस खाँ को जीवन–पर्यन्त न प्राप्त हुए वह समय के उलट–फेर और सौभाग्य से फैजुल्लाह को पहले ही दिन से प्राप्त हो गये। अन्याय और स्वेच्छा के मैदान में अब उनके घोड़ों को किसी ठोकर का भय न था। पहले करतारसिंह की ओर से कुछ शंका थी, किंतु उनकी नीति–कुशलता ने शीघ्र ही उसकी अभक्ति को परास्त कर दिा। वह अब उनका आज्ञाकारी सेवक, उनका परम शुभेच्छु था। वह अब गला फाड़–फाड़ कर रामायण का पाठ करता। सारे गांव के ईंट–पत्थर जमा करके चौपाल के सामने ढेर लगा दिये और उन पर घड़ों पानी चढ़ाता। घंटों चन्दन रगड़ता, घंटों भंग घोटता, कोई रोक–टोक करने वाला न था। फैजुल्लाह खां नित्य प्रातः काल टांघन पर सवार हो कर गांव का चक्कर लगाते, करतारसिंह और बिन्दा महराज लट्ठ लिए उनके पीछे–पीछे चलते। जो कुछ नोचे–खसोटे मिल जाता वह ले कर लौट आते थे। यों तो समस्त गांव उनके अत्याचार से पीड़ित था, पर मनाहर के घर पर इन लोगों की विशेष कृपा थी। पूस में ही बिलासी पर बकाया लगान की नालिश हई ओर उसके सब जानवर कुर्क हो गये। फैजुल्लाह को पूरा विश्वास था कि अब की चैत में किसी से मालगुजारी वसूल तो होगी नहीं, सभी पर बेदखली के दावे कर दूंगा ओश्र एक ही हल्ले में सबकों समेट लूंगा। मुसल्लम गांव को बेदखल कर दूंगा, आमदनी चटपट दूनी हो जायगी। पर इस दुष्कल्पना से उन्हें संतोष न होता था। डाँट–फटकार, गाली–गलौज के बिना रोब जमाना कठिन था। अतएव नियमपूर्वक इस नीति का सदुपवयोग किया जाने लगा। बिलासी मारे डर के घर में से निकलती ही न थी उसकी रब्बी खेत में खड़ी सूख रही थी, पानी कौन दे ? न बैल अपने थे और न किसी से मांगने का ही मुँह था।

डॉ0 इर्फान अली उस घटना के बाद हवा खाने न जा सके, सीधे घर की ओर चले। रास्ते भर उन्हें संशय हो रहा था कि कहीं उन उपद्रवियों से फिर मुठभेड़ न हो जाये नहीं तो अबकी जान के लाले पड़ जायेंगे। आज बड़ी खेरियत हुई कि प्रेमशंकर मौजूद थे, नहीं तो इन बदमाशों के हाथों मेरी न जाने क्या दुर्गति होती। जब वह अपने घर पर सकुशल पहुंच गये और बरामदे में आरामकुर्सी पर लेटे तो इस समस्या पर आलोचना करने लगे। अब तक वह न्याय और सत्य के निर्भीक समर्थक समझे जाते थे। पुलिस के विरूद्ध सदैव उनकी तलवार निकली ही रहती थी। यही उनकी सफलता का तत्व था। वह बहुत अध्ययनशील, तत्वान्वेषी, तार्किक वकील न थे, लेकिन उनकी निर्भीकता इन सारी त्रुटियों पर पर्दा डाल दिया करती थी। पर इस लखनपुर वाले मुकदमें में पहली बार उनकी स्वार्थपरता की कलई खुली। पहले वह प्रायः पुलिस से हार कर भी जीत में रहते थे, जनता का विश्वास उनके ऊपर जमा रहता था, बल्कि और बढ़ जाता था। आज पहली बार उनकी सच्ची हार हुई। जनता का विश्वास उनपर से उठ गया । लोकमत ने उनका तिरस्कार कर दिया। उनके कानों मूं उपद्रवियों के ये शब्द गूंज रहे थे, 'इन दीनों का खून इन्हीं की गर्दन पर है।' इर्फान अली उन मनुष्यों में न थे जिनकी आत्मा सिद्धि–लालसा के नीचे दब कर निर्जीव हो जाती है। वह सदैव अपने इष्ट मित्रों से कठिनाइयों का रोजना रोया करते थे और निसंदेह से आंसू उनके हृदय से निकलते थे। वह बार–बार इरादा करते थे कि इस पेशे को छोड़ दें, लेकिन जुआरियों की प्रतिज्ञा की भांति उनका निश्चय भी दृढ़ न होता था, बल्कि दिनोंदिन वह लोभ में और भी डूबते जाते थे। उनकी दशा उस पाथिक की सी थी जो संध्या होने से पहले ठिकाने पर पहुंचने के लिए कदम तेजी से बढ़ाता है। इर्फान अली वकालत छोड़ने के पहले इतना धन कमा लेना चाहते थे कि जीवन सुख से व्यतीत हो। अतएव वह लोभमार्ग में और भी तीव्र गति से चल रहे थे।

गोदान

अलादीन बीड़ी जलता हुआ बोला– खरच अल्लाह देगा भैया !सोचो, कितना आराम मिलेगा? मैं तो कहता हूँ, जितना तुम

अकेले खरच करते हो, उसी में गृहस्थी चल जाएगी। औरत के हाथ में बड़ी बरक्कत होती हैं। खुदा कमस, जब मैं अकेला यहां रहता था, तो चाहे कितना ही कमाऊँ, खा–पी सब बराबर। बीड़ी–तमाखू को भी पैसा न रहता। उस पर हैरानी। थके–मांदे आओ तो घोड़े को खिलाओ ओर टहलाओ। फिर नानबाई की दुकान पर दौड़ो । नाक में दम आ गया। जब से घरवाली आ गई है, उसी कमाई में उसकी रोटियाँ भी निकल आती हैं और आराम भी मिलता है। आखिर आदमी आराम के लिए ही तो कमाता है। जब जान खपाकर भी आराम न मिला, तो जिन्दगी ही गारत हो गई। मैं तो कहता हूं, तुम्हारी कमाई बढ़ जाएगी भैया। जितनी देर में आलू और मटर उबालते हो उतनी देर में दो–चार प्याले चाय बेच लोगे। अब चाय बारहों मास चलती हैं। रात को लेटोगे तो घरवाली पाँव दबाएगी। सारी थकान मिट जाएगी।

सेवासदन

शहर की म्युनिसिपैलिटी में कुल अठारह सभासद् थे। उनमें आठ मुसलमान थे और दस हिन्दू। सुशिक्षित मेम्बरों की संख्या अधिक थी, इसलिए शर्माजी को विश्वास था कि म्युनिसिपैलिटी में वेश्याओं को नगर से बाहर निकाल देने का प्रस्ताव स्वीकृत हो जायेगा। वे सब सभासदों से मिल चुके थे और इस विषय मे उनकी शंकाओं का समाधान कर चुके थे, लेकिन मेम्बरों में कुछ ऐसे सज्जन भी थे, जिनकी ओर से घोर विरोध होने का भय था। ये लोग बड़े व्यापारी, धनवान् और प्रभावशाली मनुष्य थे। इसलिए शर्माजी को यह भय भी था कि कहीं शेष मेम्बर उनके दबाव में न आ जाये।

हिन्दुओं में विरोधी दल के नेता सेठ बलभद्रदास थे और मुसलमानों में हाजी हाशिम। जब तक विट्ठलदास इस आंदोलन के कर्ता–धर्ता थे, तब तक इन लोगों ने उसकी ओर कुछ ध्यान न दिया था, लेकिन जब से पद्मसिंह और म्युनिसिपैलिटी के अन्य कई मेम्बर इस आंदोलन में सम्मिलित हो गये थे, तब से सेठजी और हाजी साहब के पेट में चूहे दौड़ रहे थे। उन्हें मालूम हो गया था कि शीर्घ ही यह मन्तव्य सभा में उपस्थित होगा, इसलिए दोनों महाशय अपने पक्ष को स्थिर करने में तत्पर हो रहे थे। पहले हाजी साहब ने मुसलमान मेम्बरों को एकत्रा किया। हाजी साहब का जनता पर बड़ा प्रभाव था और वह शहर के समस्त मुसलमानों के नेता समझे जाते थे। शेष सात मेम्बरों में मौलाना तेग अली एक हमामबाड़े के वली थे। मुंशी अबुलवफा इत्रा और तेल के कारखाने के मालिक थे, बड़े–बड़े शहरों में उनकी कई दुकानें थीं। मुंशी अब्दुल्लतीफ़ एक बड़े जमींदार थे, लेकिन बहुधा शहर में रहते थे। कविता से प्रेम था और स्वयं अच्छे कवि टो। शाकिर बेग़ और शरीफ़ हसन वकील थे। उनके सामाजिक सिद्धांत बहुत उन्नत थे। सैयद शफ़कत अी पेंशनर डिप्टी कलक्टर थे, और खां साहब शोहरतखां प्रसिद्ध हकीम थे। ये दोनों महाशय सभा–समाजों से प्रायः पृथक् रहते थे, किन्तु उनमें उदारता और विचारशीलता की कमी न थी। दोनों धार्मिक प्रवृत्ति के मनुष्य थे। समाज मे उनका बड़ा सम्मान था।

हाजी हाशिम बोले–बिरादराने वतन की यह नयी चाल आप लोगों ने देखी ? वल्लाह इनको सूझती खूब है ! बग़ली घूंसे मारना कोई इनसे सीख ले। मैं तो इनकी रेशादवानियों से इतना बदजन हो गया हूं कि अगर इनकी नेकनीयती पर ईमान लाने में नजात भी होती हो तो न लाऊं।

अबुलवफ़ा ने फरमाया–मगर अब खुदा के फ़ज़ल से हमको भी अपने नफ़े–नुकसान का एहसास होने लगा । यह हमारी तादात को घटाने की सरीह कोशिश है। तवायफ नब्बे फीसदी मुसलमा हैं, जो रोज़े रखती हैं, इजादारी करती हैं, मौलूद और उर्स करती हैं। हमें उनके ज़ाती फैलों से कोई बहस नहीं हैं। नेक व बद की सजा व जज़ा देना खुदा का काम है। हमको तो सिर्फ उनकी तादाद से ग़रज है।

रूस्तमभाई बड़े निर्भीक, स्पष्टवादी पुरूष थे। वे चिम्मनलाल का उत्तर देने के लिए खड़े हो गये और बोले– मुझे देखकर शोक हो रहा है कि आप लोग एक सामाजिक प्रश्न को हिन्दू–मुसलमानों के विवाद का स्वरूप दे रहे हैं। सूद के प्रश्न को भी यही रंग देने की चेष्टा की गयी थी। ऐसे राष्ट्रीय विषयों को विवादग्रस्त बनाने से कुछ हिन्दू साहुकारों का भला हो जाता है, किन्तु इससे राष्ट्रयता को जो चोट लगती है, उसका अनुमान करना कठिन है। इसमें संदेह नहहीं कि इस प्रस्ताव के स्वीकृत होने से हिन्दू साहुकारों को अधिक हानि पहुंचेगी, लेकिन मुसलमानों पर भ्ज्ञी इसका प्रभाव अवश्य पड़ेगा। चौक और दालमण्डी में मुसलमानों की दुकाने कम नहीं हैं। हमें प्रतिवाद या विरोध की धुन में अपने मुसलमान भाइयों की नीयत की सच्चाई पर सन्देह न करना चाहिए। उन्होंने इस विषय में जो कुछ निश्चय किया है, वह सार्वजनिक उपकार के विचार से किया है। अगर हिन्दुओं की इससे अधिक हानि हो रही है, तो यह दूसरी बात है। मुझे विश्वास है कि मुसलमानों की इससे अधिक हानि हो रही है, तब भी उनका यही फैसला होता। अगर आप सच्चे हृदय से मानते हैं कि यह प्रस्ताव एक सामाजिक कुप्रथा के सुधार के लिए उठाया गया है, तो आपको उससे स्वीकार करने में कोई बाधा न होनी चाहिए, चाहे धन की कितनी ही हानि हो । आचरण के सामने धन का कोई महत्व न होना चाहिए।

महबूबजान एक धनसम्पन्न वेश्या थी। उसने आना सर्वस्व अनाथालय के लिए दान कर दिया था। संध्या समय सब वेश्याएं उसके मकान पर एकत्रित हुई, वहां एक महती सभा हुई। शाहज़ादी ने कहा–बहनो, आज हमारी जिन्दगी का एक नया दौर शुरू होता है। खुदाताला हमारे इरादे में बरकत दें और हमें नेक रास्ते पर ले जाये। हमने बहुत दिन बेशर्मी और जिल्लत की जिन्दगी बसर की, बहुत दिन शैतान की कैद में रही। बहुत दिनों तक अपनी रूह और ईमान का खून किया और बहुत दिनों तक मस्ती और ऐशपरस्ती में भूली रहीं। इस दालमण्डी की जमीन हमारे गुनाहों से सियाह हो रही है। आज खुदावन्द करीम ने हमारी हालत पर रहम करके हमें कैद के गुनाह से निजात दी है, इसके लिए हमें उसका शुक्र करना चाहिए। इसमें शक नही कि हमारी कुछ बहनों को यहां से जलावतन होने का कलंक होता होगा, और इसमें भी शक नहीं कि उन्हें आने वाले दिन तारीक नज़र आते होंगे। उन बहनों से मेरा यही इल्तमास है कि खुदा ने रिज्क (जीविका) का दरवाज़ा किसी पर बन्द नहीं किया है। आपके पास वह हुनर है कि उसके कदरदां हमोश रहेंगे। लेकिन अगर हमों आइन्दा तकलीफें भी हों तो हमको साबिर व शाकिर (शांत) रहना चाहिए। हमें आइन्दा जितनी ही तकलीफें होंगी, उतना ही हमारे गुनाहों को बोझ हलका होगा। मैं फिर खुदा से दुआ करती हूं कि वह हमारे दिलों को अपनी रोशनी से रोशन करें और हमें राहे नेक पर चलने की तौफ़ीक (सामर्थ्य) दे।

रंगभूमि

सहसा एक ओर से दो बच्चे खेलते हुए आ गये, दोनों नंगे पांव थे, फटे हुए कपड़े पहने, पर प्रसन्न–वदन । माहिर अली को देखते ही चचा–चाचा कहते हुए उसकी तरफ दौड़े। ये दोनों साबिर और नसीमा थे। कुल्सूम ने इसी मुहल्ले में एक छोटा–सा मकान । रूपये किराये पर ले लिया था। गोदाम का मकान जॉन सेवक ने खाली करा लिया ाि। बेचारी इसी छोटे–से घर में पड़ी अपने मुसीबत के दिन काट रही थी। माहिर ने दोनों बच्चों को देखा, तो कुछ झेंपते हुए बोले–भाग जाओ, यहां क्या करने आये? दिल में शरमाये कि सब लोग कहते होंगे, ये इनके भतीजे हैं, इतने फटे हाल, यह उनकी खबर भी नहीं लेते।

साहित्यिक सर्वेक्षण

प्रेमचन्द के उपन्यास पर 19वीं एवं बीसबीं सदी में कई बहुमूल्य कार्य हुए हैं, जिसमें सामाजिक गतिविधियों एवं मुस्लिम समाज का चित्रण के विभिन्न तथ्यों को रेखांकित किया गया है। पूर्व अध्ययनों की समीक्षा के तहत विभिन्न आचार्यों द्वारा संपादित कार्यों का अवलोकन किया गया है।

सिंह, त्रिभुवन (2022)

हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद, सांप्रदायिकता को लेकर उन्होंने लिखा, "मैं एक इंसान हूं. जो इन्सानियत रखता हो, इन्सान का काम करता हो, मैं वही हूँ और ऐसे ही लोगों को चाहता हूं। प्रेमचन्द साम्प्रदायिकता को ऐसा पाप मानते थे जिसका कोई प्रायश्चित नहीं।

शुक्ल, रामचन्द्र (2021)

हिन्दी साहित्य का इतिहास, "मैं उस धर्म को कभी स्वीकार नहीं करना चाहता जो मुझे यह सिखाता हो कि इन्सानियत, हमदर्दी और भाईचारा सब–कुछ अपने ही धर्म वालों के लिए है, उस दायरे के बाहर जितने लोग हैं सभी गैर हैं, उन्हें जिन्दा रहने का कोई हक नहीं, तो मै उस धर्म से अलग होकर विधर्मी होना ज्यादा पसंद करुंगा।"

शर्मा, रामविलास (2008)

प्रेमचन्द और उसका युग, मुंशी प्रेमचंद का साहित्य उनके बचपन पर आधारित था क्योंकि उन्होंने ''सौतेली माँ का व्यवहार, बाल विवाह, किसानों और क्लर्कों का दुखी जीवन, और धार्मिक कर्मकांड के साथ साथ पंडे–पुरोहितों का कर्मकांड अपनी किशोरावस्था में ही देख लिया था। यही अनुभव आगे चलकर उनके लेखन का विषय बन गया।

श्रीवास्तव, शिवनारायण (1959)

हिन्दी उपन्यास, उनके लेखन में किसानों की आर्थिक बदहाली, धार्मिक शोषण (गोदान), बाल विवाह (निर्मला), छूआछूत, जाति भेद (ठाकुर का कुआँ), विधवा विवाह, आधुनिकता, दहेज प्रथा, स्त्री–पुरुष समानता सब कुछ देखने को मिलता है। . उपरोक्त पुस्तकों में प्रेमचन्द के उपन्यास से संबन्धित विभिन्न तथ्यों का अवलोकन प्रस्तुत किया गया है

उद्देश्य

प्रस्तावित आलेख का महत्त्व एवं उसकी प्रासंगिकता और उद्देश्य निम्नलिखित तथ्यों पर आधारित हैः–

इस अध्ययन के आधार पर प्रेमचन्द के उपन्यासों में मुस्लिम समाज का चित्रण का तथ्यपरक विश्लेषण किया गया है ।

अध्ययन पद्धति

यह आलेख मुख्य रूप से वर्णन एवं विश्लेषण पर आधारित है । साथ ही ऐतिहासिक अध्ययन पद्धति के आधार पर विभिन्न संस्थाओं, कार्यालयों एवं पुस्तकालयों से तथ्यों का संकलन किया गया है । वर्तमान अध्ययन मुख्य रूप से द्वैतियक स्रोत पर ही आधारित है।

निष्कर्ष

उनका पहला उपन्यास सेवा सदन था जो 1918 में लिखा गया।इसे उन्होंने उर्दू में लिखा था और नाम दिया था बाजारे हुस्न। बाद में इसका हिन्दी में अनुवाद किया गया और नाम रखा गया सेवा सदन।उनके इस उपन्यास में एक स्त्री के वेश्या बनने की कहानी का बखूबी कही गई है।इसके अलावा उन्होंने किसान आंदोलन को भी एक उपन्यास का रूप दिया, जिसका नाम था प्रेमाश्रम। कहा जाता है कि किसानों के जीवन पर लिखा हिन्दी में यह उनका पहला उपन्यास है।इसके बाद उन्होंने कई उपन्यास लिखे।इनमें रंगभूमि, कायाकल्प, निर्मला, गबन और कर्मभूमि शामिल है.गोदान मुंशी प्रेमचंद का सबसे प्रसिद्ध उपन्यास रहा है।कई दशक लेखन करने के बाद 8 अक्टूबर 1936 को उनके जीवन का सफर खत्म हो गया लेकिन भारतीय साहित्य के इतिहास में अमर हो गए।

संदर्भ

1. सिंह, त्रिभुवन (2022) हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद, वाणी प्रकाशन, दिल्ली।
2. शुक्ल, रामचन्द्र (2021) हिन्दी साहित्य का इतिहास, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली।
3. शर्मा, रामविलास (2008) प्रेमचन्द और उसका युग, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।
4. श्रीवास्तव, शिवनारायण (1959) हिन्दी उपन्यास, सरस्वती मंदिर, वाराणसी।